प्रस्तावना

ज्ञान का मानव जीवन में अधिक महत्वपूर्ण स्थान है, राष्ट्र का विकास करना है तो शिक्षा का मजबूत आधार होना चाहिए। राष्ट्र विकास याने केवल भौतिक प्रगति नही है, इसमें मानव के व्यवहार में बदलाव होकर उसका समाज के हित में प्रेरित होनी चाहिए। राष्ट्र, धर्म, भाषा, वर्ण, जात, लिंग, प्रांत यह मतभेद न करते हुए सकल विश्व के कल्याण हेतु मानव को कार्य करना चाहिए। कम से कम विश्व के प्रति गलत व्यवहार नहीं करना चाहिए। इसलिए मानव को प्रेरित करने के लिए शिक्षा ये महत्वपूर्ण साधन है।

जग में प्रगति के स्तर अनुसार विकसित राष्ट्र, विकासशील राष्ट्र, पिछड़ा राष्ट्र ऐसे प्रकार किये जाते है। विकसित राष्ट्र भौतिक प्रगति से सुखसमृद्ध जीवन का अनुभव लेते है, ऐसे राष्ट्र के नागरिकों की मूलभूत जरुरत सहज पूरी होती है पर विकसनशील और पिछड़ा राष्ट्र अपने नागरिकों की जीवन आवश्यक जरुरत भी पूरा नही कर पाते। विकसित राष्ट्र की प्रगति का अध्ययन किया तो उनकी प्रगति में सबसे बड़ा महत्वपूर्ण घटक शिक्षा है। सभी विकसित राष्ट्र सौ टक्का साक्षर हुयी इससे यह सिद्ध होता है कि राष्ट्र विकास के लिए शिक्षा के अलावा पर्याय नही।

प्राचीन काल में कला, विद्या इस क्षेत्र में सामने रहनेवाले भारत पर पराधीनता के दुष्परिणाम हुए। भारत पर सदा आक्रमण होते रहे और यहा का समाज जीवन स्थिर जीवन से परावलम्बी हुआ। अंग्रेजो की गुलामगिरी से भारत मुक्त हुआ। भारत को स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिए लडने वाले नेताओं को शिक्षा का महत्व समझ में आया। भारतीय जनता को शिक्षित करने के लिए नियोजनबद्ध कार्यक्रम शुरू से बनाया गया। उसकी घटनात्मक तरतूद की गयी। परन्तु गरीबी, बढ़ती लोकसंख्या, अमानवीय रूढ़ि ऐसे अनेक कारणों से शिक्षा के प्रसार को नियोजन अनुसार गति प्राप्त नही हुयी। इस कारण भारत में साक्षरता का प्रश्न निर्माण हुआ। निरक्षर जनता को राष्ट्रविकास के कार्य में सहभागी करने के लिए उनको साक्षर करने की जरुरत निर्माण हो गयी। इससे शासन और स्वयंसेवी संस्था ने अनेक योजना हाथ लेकर साक्षरता बढाने को शुरुआत की । प्राथमिक शिक्षा देते हुए ऐसा विचार किया गया कि प्राथमिक शिक्षण ले के आगे का शिक्षण लेना शक्य न हो, तो वह प्राप्त शिक्षा की जोर पर दैनंदिन व्यवहार कर सके। प्राथमिक शालेय स्तर के अभ्यासक्रम की रचना उसी दृष्टि से की गयी। प्राथमिक शिक्षा का प्रसार करने हेतु शासन की तरफ से विविध स्तर पर उपाय योजना की गयी। इस उपाय योजना से नागरिको ने शिक्षक की नियुक्ति करके सुविधा का स्कूल चलाया जाये ऐसी वस्तीशाला योजना महाराष्ट्र में अस्तित्व में आयी।

प्राथमिक शिक्षा यह शिक्षा की महत्वपूर्ण अवस्था है। इस काल में व्यक्तिमत्व, वृत्ति, सामाजिकता, आदतें, अध्ययन कौशल, विचारों का आदान प्रदान इन बातोँ का बेस दिया जाता है। पठन, लेखन, और गणन यह तीन मूलभूत कौशल इस काल में सम्पादित की जाती है। मूल्यों का सम्पादन तथा पर्यावरण की जानकारी । इसी काल में शारीरिक वृद्धि होती है। इसलिए प्राथमिक शिक्षा दर्जेदार मिले, इसी में शिक्षा की सार्थकता है।

शासन की तरफ से समय समय पर जरुरत के अनुसार योग्य प्रयास करके भी जबरदस्त प्राथमिक शिक्षा जनता को नही मिली। इसलिए 'दर्जेदार प्राथमिक शिक्षा का सार्वत्रीकरण' इस नाम से शासन ने अनेक योजनायें शुरू की।

महाराष्ट्र में 'प्राथमिक शिक्षा गुणवत्ता विकास अभियान' योजना शुरू की गयी। वर्धा जिला यह विदर्भ में स्थापित है। इस अभियान के तहत 'गुणवत्तापूर्ण सार्थक शिक्षण अभियान' DIET द्वारा नई तालीम की सहायता से चलाया गया है। इस कार्यक्रम के अंतर्गत प्राथमिक स्तर पर क्या प्रगति हुयी। इसका अध्ययन करने के लिए यह शोध किया गया। प्राथमिक शिक्षा के प्रगति की कार्ययोजना के इतिहास को जानना जरुरी होगा।

1.1शिक्षा की परिभाषा व अर्थ

"शिक्षा जीवन पर्यंत चलने वाली प्रक्रिया है तथा अनुभव के द्वारा हमारे व्यवहार में जो परिवर्तन आते है, वे सभी शिक्षा के फलस्वरूप है।" [1]

महात्मा गाँधी

"शिक्षा से मेरा अभिप्राय है , बच्चे तथा मनुष्य के शरीर ,मन तथा आत्मा से सर्वोत्तम तत्वों को प्राप्त करना ।"[2]

महात्मा गाँधी

उपरोक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि शिक्षा मनुष्य के जन्म से लेकर मृत्यु तक चलने वाली प्रक्रिया है तथा मनुष्य के व्यवहार में जीवन पर्यंत जो परिवर्तन होते रहते है , वे सब शिक्षा के परिणाम स्वरुप होते है । मनुष्य एक चिन्तनशील प्राणी है तथा शिक्षा के द्वारा मन तथा आत्मा से सर्वोत्तम तत्वों को प्राप्त करता है। इस प्रकार मनुष्य के जीवन के सर्वांगीण विकास के लिए शिक्षा अत्यंत आवश्यक है।

[1] शर्मा,ड.म. (2010).मानवाधिकार एवं शिक्षा. जयपुर: अपोलो प्रकाशन.पृ.सं.199
[2] वहीं पृ.सं.199

"भारतीय परम्पराओं के अनुसार शिक्षा रोजी कमाने का साधन मात्र नहीं है, न ही विचारों का पालन पोषण है और न ही नागरिकता की पाठशाला । यह आत्मा के जीवन का आरम्भ है, मानवीय आत्मा का सत्य की खोज के लिए प्रशिक्षण है और नेकी का अभ्यास है। यह दूसरा जन्म है।"[3]

विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग

उपरोक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि भारतीय परम्परा और संस्कृति में शिक्षा जीवन जीने के लिए किसी के विचारों को मानना और रोजी-रोटी कमाना नहीं है, अपितु यह जीवन जीने के तरीके व सत्य की खोज के लिए शिक्षण है, जिससे मानव अपने जीवन को और बेहतर बना सकने में सफल हो सके ।

शिक्षा का अर्थ अनुभवों का निर्माण एवं पुन:निर्माण होता है। इस प्रकार पाठशाला के बाहर भी जो अनुभव प्राप्त किये जाते है।"[4]

जाँन डीवी

मानव एक विचारशील प्राणी है जो निरंतर अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु विवरण करता रहता है, अत: उपरोक्त परिभाषा से स्पष्ट है कि शिक्षा केवल एक पाठशाला में बैठ कर ही नहीं प्राप्त किया जाता है बल्कि पाठशाला के बाहर अनुभव से सिखाना भी शिक्षा हैं, मानव जीवन पर्यंत अपने अनुभव से सीखता रहता है और साथ ही साथ दूसरों के अनुभव से भी सीखता रहता है।

इन अर्थो से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि शिक्षा वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा शारीरिक, मानसिक और सांस्कृतिक विकास होता है। बच्चों के अन्दर कुछ शक्तियां जन्म से निहित होती है जिसे जन्मजात या प्रकृति प्रदत्त शक्तियां भी कहा जाता है। शिक्षा वह है जो बालक के अन्दर निहित इन शक्तियों को बाहर निकले, उनका विकास करे। शिक्षा के माध्यम से बालक के व्यक्तित्व का पूर्णत: विअकास होता है। इस प्रकार शिक्षा विकास की एक प्रक्रिया है। यह मन, मस्तिष्क और शरीर की शक्तियों को एकजुट करने का नाम है। शिक्षा जड़ नहीं बल्कि चेतन तथा स्व-इच्छित द्विमुखी

[3] शर्मा, ड. म. (2010). मानवाधिकार एवं शिक्षा.जयपुरः अपोलो प्रकाशन.पृ.सं.199
[4] वहीं. पृ.सं 199

प्रक्रिया है। इस दृष्टि से शिक्षा के लिए दो व्यक्तियों का होना आवश्यक है-एक शिक्षक और दूसरा छात्र शिक्षा के कुछ आदर्श, मूल्य तथा विश्वास होते है और बच्चे इनसे प्रभावित होते है। शिक्षक एक दार्शनिक है जो अपने दर्शन के अनुसार बालक के विभिन्न पक्षों का विकास कर के उनके इच्छित लक्ष्यों को प्राप्त कराने का प्रयास करता है। इस प्रकार शिक्षा एक प्रत्यक्ष साधन है, जिसके द्वारा आवश्यक लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सकता है।

1.2 शिक्षा का इतिहास

भारतीय शिक्षा का इतिहास भारतीय सभ्यता का इतिहास है। भारतीय समाज के विकास और उसमें होने वाले परिवर्तनों की रुपरेखा में शिक्षा की जगह और उसकी भूमिका को निरंतर विकासशील पाया गया है। प्राचीन भारत में जिस शिक्षा व्यवस्था का निर्माण किया गया, वह समकालीन विश्व की शिक्षा व्यवस्था से उन्नत व उत्कृष्ट थी। लेकिन कालांतर में भारतीय शिक्षा व्यवस्था का ह्रास हुआ है। यहाँ पर हम विभिन्न काल में शिक्षा व उसकी प्रकृति को देखेंगे।

1.2.1 प्राचीन काल में शिक्षा- प्राचीन भारत में शिक्षा का उदय वेदों से माना जाता है।[5] भारत की प्राचीन शिक्षा आध्यात्मिकता पर आधारित थी। शिक्षा, मुक्ति एवं आत्मबोध के साधन के रूप में थी। यह व्यक्ति के लिए नहीं बल्कि धर्म के लिए थी । भारत की शैक्षिक एवं सांस्कृतिक परम्परा विश्व इतिहास में प्राचीनतम है। प्राचीन काल में शिक्षा को अत्यधिक महत्व दिया जाता था। भारत 'विश्व गुरु' कहलाता था। विभिन्न विद्वानों ने शिक्षा को प्रकाशस्त्रोत, अंतर्दृष्टि, अंतर्ज्योति, ज्ञानचक्षु और तीसरा नेत्र आदि उपमाओ से विभूषित किया है।[6] उस युग की यह मान्यता थी कि जिस प्रकार अंधकार को दूर करने का साधन प्रकाश है, उसी प्रकार व्यक्ति के सब संशयों और भ्रमों को दूर करने का साधन शिक्षा है। प्राचीन काल में इस बात पर बल दिया गया किशिक्षा व्यक्ति को जीवन का यथार्थ दर्शन करती है, तथा इस योग्य बनाती है कि वह भवसागर की बाधाओ को पार करके अंत में मोक्ष को प्राप्त कर सके जो की मानव जीवन का परम लक्ष्य है। प्राचीन भारत की शिक्षा का प्रारंभिक रूप हम ऋग्वेद में देखते है। ऋग्वेद युग की शिक्षा का उदेश्यतत्व साक्षात्कार था। ऋग्वेद के अनुसार "शिक्षा मनुष्य को आत्म-विश्वासी तथा स्वार्थहीन बनाती है।"[7]

[5] डॉ. एस.पी. गुप्ता, & डॉ. अलका गुप्ता.(2015). भारतीय शिक्षा का इतिहास, विकास एवं समस्याएं.इलाहाबाद: शारदा पुस्तक भवन.पृ. सं.5

[6] वहीं. पृ. सं.11

[7] शर्मा, ड.म.(2010). मानवाधिकार एवं शिक्षा. जयपुर: अपोलो प्रकाशन. पृ. सं.205

1.2.2 मध्य काल में शिक्षा- भारत पर आंठवी शताब्दी में मुसलमानों ने आक्रमण करना प्रारम्भ कर दिए थे।[8] भारत में मुस्लिम राज्य की स्थापना होते ही इस्लामी शिक्षा का प्रसार होने लगा। फारसी जानने वाले ही सरकारी कार्य के योग्य समझे जाते थे। हिन्दू, अरबी व फारसी पढ़नें लगे। बादशाहों और अन्य शासकों की व्यक्तिगत रूचि के अनुसार इस्लामी आधार पर शिक्षा दी जाने लगी। साथ ही मकतबों, मदरसों और पुस्तकालयों की स्थापना होने लगी। मकतब प्रारंभिक शिक्षा के केंद्र होते थे और मदरसे उच्च शिक्षा के । मकतबों की शिक्षा धार्मिक होती थी। मकतबों की शिक्षा प्राप्त कर विद्यार्थी मदरसों में प्रविष्ट होते थे। निर्धन विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति भी मिलती थी। अनाथालयों का संचालन होता था। शिक्षा नि:शुल्क थी। हस्तलिखित पुस्तकें पढ़ी और पढ़ाई जाती थी। शिक्षा को कंठस्थ कराने की परम्परा थी। प्रश्नोत्तर, व्याख्या और उदाहरणों द्वारा पाठ पढ़ाए जाते थे। कोई परीक्षा नहीं थी। दिल्ली, आगरा, बीदर, जौनपुर, मालवा मुस्लिम शिक्षा के केंद्र थे। मुस्लिम शासकों के संरक्षण के अभाव में भी संस्कृत काव्य, नाटक, व्याकरण, दर्शन ग्रंथो की रचना और उनका पठन पाठन बराबर होता रहा।

1.2.3 आधुनिक काल में शिक्षा-भारत में आधुनिक शिक्षा की नीव यूरोपीय, ईसाई धर्म प्रचारक तथा व्यापारियों के हाथों से डाली गयी थी। उन्होंने कई विद्यालय स्थापित किये। प्रारम्भ में मद्रास ही उनका कार्यक्षेत्र रहा। धीरे धीरे कार्यक्षेत्र का विकास बंगाल में भी होने लगा। इन विद्यालयों ईसाई धर्म के साथ-साथ इतिहास, भूगोल, व्याकरण, गणित व साहित्य आदि विषय भी पढ़ाये जाते थे। सन 1601 ईस्ट इंडिया कम्पनी की स्थापना के बाद यह कम्पनी अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए शिक्षा के प्रसार में ईसाई मिशनरियों की सहायता ली थी। आगे चलकर लार्ड मैकाले के विचारों और राजाराम मोहन राय के विचारो से प्रभावित होकर 1835 ई.में लार्ड बेंटिक ने निश्चय किया कि अंग्रेजी भाषा और साहित्य, यूरोपीय इतिहास, विज्ञान आदि की पढाई हो, परंतु अंग्रेजी और पश्चिमी विषयों के अध्ययन और अध्यापन पर जोर दिया गया। पाश्चात्य रीती से शिक्षित भारतीयों के आर्थिक स्थिति सुधरते देख जनता इधर झुकने लगी। इसी कारण से अंग्रेजी विद्यालयों में अधिक संख्या में विद्यार्थी प्रविष्ट होने लगे। सन 1853 में शिक्षा की प्रगति की जांच के लिए एक समिति बनी। सन 1854 में चार्ल्स वुड के शिक्षा संदेश-पत्र में समिति के निर्णय कम्पनी के पास भेजे गये। जिसमे संस्कृत, अरबी और फारसी का ज्ञान आवश्यक समझा गया। प्रान्तों में शिक्षा विभाग, अध्यापक प्रशिक्षण, नारी शिक्षा इत्यादि की सिफारिश की गयी। सन 1857 में स्वतंत्रता युद्ध प्रारम्भ हो गया, जिससे शिक्षा की

[8] डॉ. एस.पी. गुप्ता, & डॉ. अलका गुप्ता.(2015). भारतीय शिक्षा का इतिहास, विकास एवं समस्याएं.इलाहाबाद: शारदा पुस्तक भवन.पृ. सं.29

प्रगति में बाधा उत्पन्न हुई, और प्राथमिक शिक्षा उपेक्षित ही रह गई और उच्च शिक्षा की उन्नति होती गई। सन 1857 में कलकत्ता, बम्बई और मद्रास में विश्वविद्यालय की स्थापना हुई। मुख्यतः प्राथमिक शिक्षा की दशा की जांच करने के लिए सन 1882 में सर विलियम विलसन हंटर के अध्यक्षता में भारतीय भारतीय शिक्षा आयोग की नियुक्ति हुई। आयोग ने प्रारम्भिक शिक्षा के लिए उचित सुझाव दिए। सरकारी प्रयत्न को माध्यमिक शिक्षा से हटाकर प्राथमिक शिक्षा के संगठन में लगाने की सिफारिश की। सरकारी माध्यमिक स्कूल प्रत्येक जिले में कम से कम एक हो। शिक्षा का माध्यम माध्यमिक स्तर में अंग्रेजी रहे। आयोग की सिफारिशो से भारतीय शिक्षा में उन्नति हुई। विद्यालयों की शिक्षा बढ़ी। नगर में नगरपालिका, जिले में जिला परिषद का निर्माण हुआ और शिक्षा आयोग ने प्राथमिक शिक्षा को इनपर छोड़ दिया। परंतु इससे विशेष लाभ नहीं हो पाया। प्राथमिक शिक्षा की दशा सुधर न सकी। प्राथमिक शिक्षा का स्तर गिरता गया। सन 1911 में गोपाल कृष्ण गोखले ने प्राथमिक शिक्षा को नि:शुल्क और अनिवार्य करने का प्रयास किया। अंग्रेजी सरकार और उसके समर्थकों के कारण वे सफल न हो सके। सन 1921 से नए शासन सुधार कानून के अनुसार सभी प्रान्तों में शिक्षा भारतीय मंत्रियों के अधिकार में आ गयी। सभी प्रान्तों में प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य करने की कोशिशें व्यर्थ हुयी क्योंकि सरकारी सहयोग के अभाव के कारण इस योजना को कार्यन्वित करना सम्भव न हो सका। सन 1937 में शिक्षा की एक योजना तैयार की गई। जो सन 1938 में बुनियादी शिक्षा के नाम से प्रसिद्ध हई।इसके अंतर्गत सात से ग्यारह वर्ष के बालक बालिकाओं की शिक्षा अनिवार्य एवं मातृभाषा में करने का विचार प्रस्तुत किया गया। सन 1945 में इसे परिवर्तित कर इसका नाम नई तालीम रखा गया। हिन्दुस्तानी तालिमी संघ (भारतीय शैक्षिक संघ) पर इसका संचालन भार छोड़ दिया गया। सन 1945 में द्वितीय विश्व युद्ध समाप्त होते-होते सार्जेट योजना का निर्माण हुआ तथा 6 से 14 वर्ष की अवस्था के बालकों तथा बालिकाओं के लिए शिक्षा अनिवार्य हुई। आजादी के बाद राधाकृष्ण आयोग सन 1948-49, माध्यमिक शिक्षा आयोग (मुदलियार आयोग) 1953, कोठारी शिक्षा आयोग 1964, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1968 एवं नविन शिक्षा नीति 1986 आदि द्वारा भारतीय शिक्षा व्यवस्था को समय-समय पर सही दिशा देने की गंभीर कोशिश की गई।[9]

1.3 भारतीय शिक्षा व्यवस्था में क्रमवार परिवर्तन

भारत में शिक्षा के प्रति रुझान प्राचीन काल से ही देखने को मिलता है। प्राचीन काल में गुरुकुलों, आश्रमों तथा बौद्ध मठों में शिक्षा ग्रहण करने की व्यवस्था होती थी। तत्कालीन शिक्षा केन्द्रों में नालंदा, तक्षशिला एवं वल्लभी की गणना

[9] कुमार, अ.(2006). शिक्षा की मुक्ति.दिल्लीः ग्रंथ शिल्पी. पृ.सं.121

की जाती है। मध्य काल में शिक्षा मदरसों में प्रदान की जाती थी। मुग़ल काल में प्राथमिक शिक्षा 'मकतब' में दी जाती थी और उच्च शिक्षा मदरसों में दी जाती थी। शिक्षा के वही रूप थे, प्राथमिक और उच्च अर्थात माध्यमिक शिक्षा थी। मुग़ल शासकों ने दिल्ली, अजमेर, लखनऊ एवंआगरा में मदरसों का निर्माण करवाया। भारत में शिक्षा के विकास को निम्नलिखित क्रमों के आधार पर विश्लेषित किया जा सकता है-

- भारत में आधुनिक व पाश्चात्य शिक्षा की शुरुआत ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कम्पनी के शासन काल से हुई। 1813 ई. के चार्टर में सर्वप्रथम भारतीय शिक्षा के प्रचार-प्रसार के लिए एक लाख रूपये की व्यवस्था की गई।

- लोक शिक्षा के लिए स्थापित सामान्य समिति के दस सदस्य में दो दल बन गये थे। एक आंग्ल या पाश्चात्य विद्या का समर्थक था तो दूसरा प्राच्य विद्या का। प्राच्य विद्या के समर्थको का नेतृत्व लोक शिक्षा समिति के सचिव एच. टी. प्रिंसेस ने किया जबकि इनका समर्थन समिति के मंत्री एच.एच. विल्सन ने किया। 'अधोमुखी निस्यंदन सिद्धांत', जिसका अर्थ था- शिक्षा समाज के उच्च वर्गो को दी जाये, को सर्वप्रथम सरकारी नीति के रूप में आकलैंड ने लागू किया। 'वुड डिस्पैच' के पहले तक इस सिद्धांत के तहत भारतीयों को शिक्षित किया गया।

- बोर्ड ऑफ़ कन्ट्रोल के प्रधान चार्ल्स वुड ने 19 जुलाई, 1854 को भारतीय शिक्षा पर एक व्यापक योजना प्रस्तुत की जिसे 'वुड का डिस्पैच' कहा जाता है। इस अधिनियम में महिला शिक्षा की बात पहली बार की गयी।

- वुड के घोषणा पत्र द्वारा शिक्षा के क्षेत्र में हुई प्रगति की समीक्षा हेतु सन 1882 ई. में सरकार ने डब्ल्यू. हंटर की अध्यक्षता में 'हंटर आयोग' की नियुक्ति की। इस आयोग में 8 सदस्य भारतीय थे। आयोग को प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा की समीक्षा तक ही सीमित कर दिया गया था।

- सन 1917 ई. में कलकत्ता विश्वविद्यालय की समस्याओं के अध्ययन के लिए डॉ. एम.ई.सैडलर के नेतृत्व में 'सैडलर आयोग' गठित किया गया।

- सन 1929 ई. में सर फिलिप हार्टोग के नेतृत्व में शिक्षा के विकास पर रिपोर्ट हेतु एक सहायक समिति का गठन किया। समिति ने प्राथमिक शिक्षा के महत्व की बात की। हार्टोग समिति की सिफारिश के आधार पर सन 1935 में 'केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड' का पुनर्गठन किया गया।

- वर्धा योजना को कई नामों से जाना जाता है यथा- बुनियादी शिक्षा, बेसिक शिक्षा आदि। गांधीजी द्वारा 1937 ई. में महाराष्ट्र के वर्धा नामक स्थान पर इस योजना का सूत्रपात हुआ। इसमें शिक्षा के माध्यम से हस्त उत्पादन कार्यो को महत्व दिया गया। इसमें बालक अपनी मातृभाषा के द्वारा 7 वर्ष तक अध्ययन करता था।

- 1944 ई. में केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार मण्डलने 'सार्जेन्ट योजना' (सार्जेन्ट भारत सरकारमें शिक्षा सलाहकार थे) के नाम से एक राष्ट्रीय शिक्षा योजना प्रस्तुत की। इसमे 6 से 11 वर्ष के बच्चों के लिए नि:शुल्क अनिवार्य शिक्षा दिए जाने की व्यवस्था की गई थी।

- डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन की अध्यक्षता में सन 1948-1949में उच्च शिक्षा के सुझाव के लिए 'राधाकृष्णन आयोग' को गठन किया गया।

- 1953 ई. में राधाकृष्णन आयोग की सिफारिशों को क्रियान्वित करने के लिए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की स्थापना की गयी।

- 'मुदालियर आयोग' या 'माध्यमिक शिक्षा आयोग' का गठन सन 1952-1953 में हुआ इसने माध्यमिक शिक्षा के लिए सुझाव दिए।

- डॉ. डी. एस. कोठारी की अध्यक्षता में जुलाई 1964 ई. में कोठारी आयोग की नियुक्ति की गई। इसने प्राथमिक शिक्षा, माध्यमिक शिक्षा और उच्च अर्थात विश्वविद्यालय शिक्षा के लिए महत्वपूर्ण संस्तुतियां या सुझाव दिए।[10]

[10] डॉ. एस.पी. गुप्ता, & डॉ. अलका गुप्ता.(2015). भारतीय शिक्षा का इतिहास, विकास एवं समस्याएं.इलाहाबाद: शारदा पुस्तक भवन.पृ. सं.752

1.4 प्राथमिक शिक्षा व्यवस्था में सुधार हेतु विभिन्न नीतियां और मसौदे

प्राथमिक शिक्षा व्यवस्था में सुधार हेतु मुख्य नीतियां और मसौदे निम्न है-

1.4.1 ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड- ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड केंद्र द्वारा प्रायोजित एक कार्यक्रम है, जो देश के सभी प्राथमिक स्कूल में न्यूनतम आवश्यक सुविधा उपलब्ध कराने हेतु N.P.E.के अनुसरण में 1987 में शुरू किया गया। इस योजना का उद्देश्य प्राथमिक स्कूल में पढ़ रहे बच्चों की शिक्षा की आपूर्ति हेतु आवश्यक संस्थागत उपकरण एवं शिक्षण सामग्री प्रदान करना है। आगे चलकर इस योजना को नौवीं पंचवर्षीय योजना के तहत सभी उच्च प्राथमिक स्कूल के लिए भी लागू कर दिया गया। इस योजना के तहत सभी शिक्षकों को एक विशेष शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम के द्वारा प्रशिक्षित किया जायेगा तथा इन शिक्षक में 50% महिला होगी, जो स्कूल में बालिका नामांकन को प्रभावित करेगी। स्कूल भवन स्थानीय जरूरतों के अनुसार डिजाइन किया जायेगा, स्कूल के उपकरण और इमारतों के लिए धन केंद्र सरकार उपलब्ध कराएगी।प्राथमिक स्कूल में कम से कम तीन कमरे साथ में बरामदा तथा एक प्रधानाध्यापक कक्ष व तीन प्रशिक्षित शिक्षक होना जरुरी है। लड़का और लड़की के लिए अलग-अलग शौचालय की व्यवस्था व पीने योग्य पानी की भी समुचित व्यवस्था होनी चाहिए।

1.4.2 राष्ट्रीय शिक्षा नीति (National Policy of Education)1968- स्वतंत्रता के बाद शिक्षा को राष्ट्रीय प्रगति व विकास का सर्वाधिक महत्वपूर्ण साधन स्वीकार किया गया। तृतीय पांच वर्षीय योजना के अंतिम चरणों में इस बात की आवश्यकता महसूस की गयी शिक्षा व्यवस्था का सविस्तार व पुनर्निरीक्षण किया जाए, तब वर्ष 1964में भारत सरकार ने डॉ. दौलत सिंग कोठारी की अध्यक्षता में एक शिक्षा आयोग का गठन किया। इस आयोग ने वर्ष 1966 में अपना विस्तृत प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। कोठारी आयोग ने राष्ट्रीय शिक्षा नीति के निर्माण की आवश्यकता पर जोर देते हुए कहा की भारत सरकार को राष्ट्रीय शिक्षा नीति के संबंध में एक वक्तव्य जारी करना चाहिए जिसमें राज्यों तथा स्थानीय निकायों को अपने-अपने क्षेत्रो में शैक्षिक योजनाओं को बनाने तथा क्रियान्वित करने के लिए मार्गदर्शन मिल सके।[11] आयोग की सिफारिशों पर चर्चा हुई और वर्ष 1968 में भारत में शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी द्वारा पहली राष्ट्रीय शिक्षा नीति को लागू किया गया। भारत सरकार द्वारा घोषित इस राष्ट्रीय

[11]डॉ. एस.पी. गुप्ता, & डॉ. अलका गुप्ता.(2015). भारतीय शिक्षा का इतिहास, विकास एवं समस्याएं.इलाहाबाद: शारदा पुस्तक भवन.पृ. सं.174

शिक्षा नीति में 17 आधारभूत सिद्धांतों को स्थापित किया गया तथा यह कहा गया की भारत सरकार इन सिद्धांतो के अनुरूप देश में शिक्षा का विकास करेगी।

1.4.3 राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986- वर्ष 1968 में प्रथम राष्ट्रीय शिक्षा नीति की घोषणा तत्पश्चात क्रियान्वयन के उपरांत सत्तरह वर्षो के बाद बदली परिस्थिति व आवश्यकताओं के अनुरूप नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 लागू किया गया। इस राष्ट्रीय शिक्षा नीति को सुचारू रूप से लागू करने हेतु मानव संसाधन विकास मंत्रालय ने एक कार्यान्वयन कार्यक्रम (Programme Of Action, POA) भी तैयार किया गया। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 को कुल बारह खंडों में बाटा गया जिनमे कुल 157 बिन्दुओं के अंतर्गत नई शिक्षा नीति को लिपिबद्ध किया गया।[12]

1.4.4 राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1992- राष्ट्रीय शिक्षा नीति1986 में तत्कालीन प्रधानमंत्री पी. वी. नरसिंहराव द्वारा संशोधित कराया गया, जिसे वर्ष 2005 के तत्कालीन प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह द्वारा 'न्यूनतम साझा कार्यक्रम' के माध्यम से अपनाया गया। यह नीति राष्ट्रीय प्रगति, आम नागरिकता और संस्कृति की भावना को बढ़ावा देने के लिए तथा राष्ट्रीय एकता को मजबूत करने के उद्देश्य से शिक्षा को बढ़ावा देने के कार्यक्रम के रूप में जाना जाता है। शिक्षा के सभी स्तरों पर गुणवत्ता पूर्ण सुधार करने के लिए विज्ञान, प्रद्योगिकी और शिक्षा के बीच घनिष्ट संबंध है।

1.4.5 सर्व शिक्षा अभियान- सर्व शिक्षा अभियान भारत सरकार का एक प्रमुख कार्यक्रम है, इसकी शुरुआत तत्कालीन प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी द्वारा प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण को प्राप्त करने के लिए किया गया था। इस कार्यक्रम का उद्धेश्य 2010 तक संतोषजनक गुणवत्ता वाली प्राथमिक शिक्षा को सार्वभौमीकरण को प्रदान करना था। इसमें आठ कार्यक्रम शामिल है। इस कार्यक्रम के अनुसार उन बस्तियों में नये स्कूल बनाने का प्रयास किया जाता है जहाँ स्कूली शिक्षा की सुविधा नहीं है और अतिरिक्त कक्षा, शौचालय, पीने का पानी, रखरखाव अनुदान और स्कूल सुधार अनुदान के माध्यम से मौजूदा स्कूलों का बुनियादी ढांचे में विकास करना है। जिन मौजूदा स्कूलों में अपर्याप्त शिक्षक है, उनमें अतिरिक्त शिक्षक मुहैया कराना है, जबकि मौजूदा शिक्षकों की क्षमता को व्यापक प्रशिक्षण, विकासशील शिक्षण अधिगम सामग्री अनुदान एवं ब्लॉक और जिला स्तर पर अकादमिक संरचना को सुदृढ़ बनाने का प्रयास किया जा रहा है। सर्व शिक्षा अभियान , जीवन कौशल सहित गुणवत्ता युक्त प्रारम्भिक शिक्षा प्रदान करता है। सर्व शिक्षा अभियान में लड़कियों और विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों पर विशेष रूप से ध्यान केन्द्रित

[12] वहीं पृ.सं.208

किया गया है। सर्व शिक्षा अभियान में डिजिटल अन्तराल को खत्म करने के लिए कंप्यूटर शिक्षा प्रदान करने का भी प्रावधान किया गया है। इसमें बच्चों की उपस्थिति कम होने चलते मध्यान्ह भोजन की भी शुरुआत की गयी थी।

1.4.6 राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2016 के मसौदे के लिए कुछ इनपुट[13]**-** केन्द्रीय मानव संसाधन विकास मंत्रालय ने नई शिक्षा नीति के निर्माण के लिए सुझाव हेतु प्रमुख बिन्दुओं की चर्चा के लिए अपने वेबसाइट पर 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2016 मसौदे के लिए कुछ इनपुट' नामक दस्तावेज़ को सार्वजनिक किया है। जिसमे निम्न बातों का जिक्र किया है-

- **छात्र को फेल करने की नीति में संशोधन-** मंत्रालय की ओर से पेश किये गये इस मसौदे में इस बात का जिक्र किया गया है कि छात्रों को फेल न करने की मौजूदा प्रावधानों में संशोधन किया जायेगा, इससे छात्रो के शैक्षणिक प्रदर्शन प्रभावित होता है। मंसौदा इनपुट दस्तावेज़ में कहा गया है की फेल न करने की नीति को पाँचवीं कक्षा तक सीमित किया जायेगा और उच्च प्राथमिक स्तर पर छात्रों को फेल करने की व्यवस्था बहाल की जाएगी।

- **शिक्षा के क्षेत्र में निवेश को बढ़ा कर जीडीपी का कम से कम छ: फीसदी करना-** मंत्रालय की ओर से जारी इस दस्तावेज़ में शिक्षा के क्षेत्र में खर्च को जीडीपी के कम से कम छ: फीसदी करने और शीर्ष विदेशी विश्वविद्यालयों को भारत में आने को बढ़ावा देने की भी बात कही गयी है, भारतीय संस्थान भी विदेशों में अपने कैम्पस खोल सकती है और यदि आवश्यक हुआ तो उचित कानून बनाया जाएगा तथा तात्कालिक कानून में संशोधन भी किया जा सकता है।

- **शिक्षा आयोग का गठन** – उच्च शिक्षा के क्षेत्र में ज्ञान के नये क्षेत्रों की पहचान के लिए एक शिक्षा आयोग का गठन करने की बात कही गयी है, जिसमे शैक्षणिक विशेषज्ञों को शामिल किया जाएगा। यह आयोग हर पांच वर्ष पर गठित होगा और उसका काम ज्ञान के नये क्षेत्रो की नई पहचान करने में मानव संसाधन विकास मंत्रालय की मदद करना है।

- **स्थानीय भाषा में शिक्षा-** इस दस्तावेज़ में 'आर्थिक तौर पर कमजोर तबकों के प्रति व्यापक राष्ट्रीय प्रतिबद्धताओं के मद्देनजर शिक्षा के अधिकार कानून की धारा 12-1(सी) के तहत सरकारी सहायता प्राप्त

[13] मानव संसाधन विकास मंत्रालय.(2016). प्रारूप राष्ट्रीय शिक्षा नीति. के लिए कुछ इनपुट 2016 नई दिल्ली.भारत सरकार:

अल्पसंख्यक(धार्मिक या भाषाई) संस्थाओं के विस्तार के परीक्षण का भी सुझाव दिया है। दस्तावेज़ में यह भी बताया गया है की राज्य और केन्द्रशासित प्रदेश यदि चाहे तो पाँचवी कक्षा तक निर्देश के माध्यम (मीडियम ऑफ़ इंस्ट्रक्शन) के रूप में मातृभाषा, स्थानीय या क्षेत्रीय भाषा का प्रयोग शिक्षा प्रदान करने में कर सकते है। लेकिन यदि प्राथमिक स्तर तक निर्देश का माध्यम मातृभाषा, स्थानीय का क्षेत्रीय भाषा है तो दूसरी भाषा अंग्रेजी होगा और उच्च प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तरों पर तीसरी भाषा चुनने का अधिकार संवैधानिक प्रावधानों के अनुसार राज्यों और स्थानीय अधिकारियों के पास होगा। नीति के मंसौदे से संबंधित इस दस्तावेज़ में यह भी कहा गया है कि स्कूलों और विश्वविद्यालय के स्तर पर संस्कृत पढ़ाने की सुविधाएँ भी प्रदान की जाएगी।

गुणवत्ता विकास कार्यक्रम के तहत गुणवत्तापूर्ण सार्थक शिक्षण अभियान

'शिक्षा' मनुष्य जीवन की महत्वपूर्ण साधना है। वृत्ति, प्रवृत्ति और संस्कृति के क्रम में शिक्षा एक ऐसा माध्यम बन गया है, जिसके बिना व्यक्तित्व अधूरा सा लगता है। वर्तमान में तो शिक्षा के द्वारा ही मनुष्य को मापा-तोला भी जाता है। उत्पादक शक्ति और क्षमता को परखा जाता है। इसलिए शिक्षा जीवन का महत्वपूर्ण अंग बन गया है। शिक्षा विचार, सृजन और निर्माण की महत्वपूर्ण कड़ी है, इस बात पर शायद कम ही सोचा जाता है, जो हमारी अपनी सबसे बड़ी खामी है। अध्ययनों, अन्वेषणों तथा अनुसंधानों से ज्ञात हुआ है कि, मनुष्य की अस्मिता उसके अपने मस्तिष्क में है और वह उसे जैसे जैसे जानता तथा समझता है, उतना वह अपने आपको समृद्ध एवं शक्तिवर्धक महसूस करता है।

'ज्ञात से अज्ञात' की ओर , 'मूर्त से अमूर्त' की ओर जाने में सामाजिक, मनोसामाजिक, मनोवैज्ञानिक, मानस और वर्तनवादी दृष्टि से देखने की जरूरत है जो तत्व-सिद्धांत और बुनियादी जरुरत के आधार पर गढ़े है। शिक्षा को राष्ट्रीय सशक्ती तथा एकता के प्रोत्साहन के लिए मध्यस्थ तथा प्रेरक की भूमिका भी अदा करना है जिससे छात्रों को शक्ति मिले कि वे सामाजिक परिवर्तन के साधन बन सके। शिक्षा जागरूकता बढ़ाने, अधिक खुलापन, प्रश्न पूछने की क्षमता, एवं साहस और समाधान की तलाश में दृढ़ता का कार्य प्रशस्त करती है। दूसरे शब्दों में, आरम्भिक शिक्षा का आधार अनुभव होता है जो व्यक्ति को जीवन आरम्भ करने के लिए प्रभावशाली तथा सृजनात्मक ढंग से जीवन के कई कार्यों तथा चुनौतियों का सामना करने को तैयार करता है। इसे हम अपने पास समेटकर बंद तालों में रख नही सकते कि जब काम हो तो उसका उपयोग करके अपनी समस्या का निवारण कर लेंगे। इसीलिए शिक्षा केवल प्रमाणपत्र या

डिग्री के लिए नही होनी चाहिए । यह एक आरम्भिक शिक्षा होनी चाहिए जिसका उद्देश्य व्यक्ति को जीवन यात्रा आरम्भ करने के लिए न्यूनतम ज्ञान, अभिव्यक्ति, मूल्य तथा कौशलों से सज्जित किया जाना चाहिए। [14]

शिक्षक

राष्ट्र और समाज विकास के लिए शिक्षण प्रक्रिया अत्यंत महत्वपूर्ण है । इस शिक्षण प्रक्रिया में शिक्षक का स्थान महत्वपूर्ण है ।अच्छा शिक्षक ये समाज का आदर्श होता है । किसी भी समाज की उचाई शिक्षक पर निर्भर होती है । राष्ट्र के लिए भावी नागरिक बनाने का महत्वपूर्ण कार्य शालेय स्तर पर शिक्षक करता है । शिक्षण प्रक्रिया के केंद्र स्थान पर बालक होता है। परन्तु उस बालक को समाजोंभिन्मुख बनाने, और सर्वांगीण विकास करने का कार्य शिक्षक करता है ।क्षमताधिष्टित शिक्षक शिक्षण के भारतीय आराखडे में 10 क्षमता, 5 बांधिलकी क्षेत्र, 5 वर्तन क्षेत्र बताये गये है। संदर्भीय, सम्बोधन, आशय ज्ञान, शैक्षणिक व्यवहार, शैक्षणिक कार्य, शैक्षणिक साहित्य निर्मिती एव उपयोग, मुल्यमापन , व्यवस्थापन, पालक सम्पर्क, समाज सम्पर्क की क्षमता हो । अध्ययनार्थी, समाज ,व्यवसाय, उत्कृष्टता, मूलभूत मानवी मूल्य की बांधिलकी हो । कक्षा में वर्तन, शालेय स्तर पर वर्तन, शालाबाह्य कार्य में वर्तन, पालक सम्पर्क वर्तन, समाज सम्पर्क वर्तन इन तीनो का समन्वय महत्व पूर्ण है।

शिक्षक के व्यवसायिक दर्जे पर स्कूल के शिक्षा का दर्जा निर्भर है। इसलिए बदलते दौर में शिक्षक का व्यवसायिक दर्जा कौशलों की वृद्धि के लिए 'शिक्षण प्रशिक्षण' की आवश्यकता है । शिक्षण अंतर्गत सभी प्रकार के औपचारिक एव अनौपचारिक कृति और अनुभव, जिसके तहत व्यक्ति की शैक्षिक व्यवस्था का जिम्मेदार घटक हेतु गुणवत्ता एव क्षमता की वृद्धि की जाती है उसे शिक्षक माना जाता है । डी-ला सेले ने जर्मनी में 18 वी सदी में normal school की स्थापना करके शिक्षक प्रशिक्षण की शुरुआत की है। उनको शिक्षण प्रशिक्षण का जनक कहते है । भारत में 1802 में बंगाल के सेरामपुर में प्रथम normal school शुरू हुआ । उसके बाद मुंबई , मद्रास , कोलकाता में शुरू हुआ । 1937 में वर्धा शिक्षण योजना में मुलोद्योगी शिक्षण का समावेश शिक्षण प्रशिक्षण में हो और वह शिक्षण स्थानिक जरूरतों से मेल खाए ऐसी सिफारिश की गयी।

राष्ट्रीय शैक्षणिक धोरण 1986 में प्राथमिक स्कूलों के शिक्षक प्रशिक्षण के लिए जिला शिक्षण प्रशिक्षण की स्थापना की जाये, ऐसी सिफारिश की गयी थी ।

[14] नई तालीम समिति सेवाग्राम(2016).गुणवत्ता सार्थक शिक्षण अभियान. प्रतिवेदन

जिला शिक्षण और प्रशिक्षण संस्था

इ. स. 1986 के राष्ट्रीय शैक्षणिक धोरण के अनुसार हर एक जिले में जिला शिक्षण और प्रशिक्षण संस्था (District Institute of Education and Training-DIET) की स्थापना का तय किया गया। के अनुसार महाराष्ट्र में जून , 1995 में 14 और 1996 में 15 जिलो में जिला शिक्षण और प्रशिक्षण संस्था की स्थापना की गयी। DIET में प्राचार्य, ज्येष्ट अधिव्याखता, अधिव्याखता ऐसे पद होते है। जिला स्तर पर शिक्षक शिक्षण के संशोधन करने की संस्था के रूप में DIET कार्य करती है। DIET 'सेवापपूर्व और सेवान्तार्गत प्रशिक्षण', अभ्यासक्रम विकसन और मूल्यमापन', शैक्षणिक तंत्रज्ञान और अनौपचारिक शिक्षण',नियोजन और प्रशासन' ऐसे चार विभागों में कार्यरत है।

21 वी सदी में अपेक्षाओं का प्रस्फोट, ज्ञान का प्रस्फोट और जनसंख्या का प्रस्फोट ये आव्हान है। इस आव्हान का सामना करने के लिए शिक्षकों को नौकरी से पहले दिया हुआ ज्ञान अभी के तुलना कम है। उसी तरह शिक्षण क्षेत्र नयी जानकारी, नया विचारप्रवाह , अध्यापन पद्धति और तंत्र इसका ज्ञान शिक्षकों में होना जरूरी है। इसलिए सेवान्तार्गत प्रशिक्षण की आवश्यकता है।

राज्य और केंद्र ने अनेक अधिकार व अधिनियम की तरतुदी तय की है। क्योकि व्यक्ति को राष्ट्र विकास का महत्वपूर्ण संसाधन माना गया है। **"बालक के नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा का हक्क अधिनियम 2009" के माध्यम से मूलभूत हक्क इस वर्ग में शिक्षण** को अंतर्भूत किया गया है। इसलिए गुणवत्तापूर्ण शिक्षण का सार्वत्रीकरण और वंचित घटक का सर्वसमावेश करने की दृष्टि से अधिकारात्मक कदम उठाये गये है। इस दृष्टिकोण से शिक्षण से अपेक्षित साध्य करने के लिए अनेक शैक्षणिक और ज्ञानात्मक कार्यक्रम, उपक्रम और योजना की जा रही है। उन्नत और अच्छा जीवन जीने के लिए जीवन कौशलो उम्र के अनुसार संख्यात्मक और गुणात्मक क्षमता निर्माण हो। इसीलिए शालेय शिक्षण की माध्यम से प्रयास शुरू है।इस दृष्टि से राज्य ने अनेक शिक्षण व्यवस्था और यंत्रना मार्फत नवोप्रक्रम और अभियान शुरू किया है। इस कारण व्यापकता से सर्वेक्षण, मूल्यांकन और देखरेख करके प्रगत और अप्रगत गुट करके जरूरत और मांग नुसार शैक्षणिक प्रयास किया जा रहा है। महाराष्ट्र राज्य पूर्ण प्रगत हो और शैक्षणिक गुणवत्ता सक्षम हो इसलिए अलग अलग उपक्रम से प्रोत्साहन दिया जा रहा है। शिक्षण, प्रशिक्षण संस्था, निरंतर शिक्षण और राज्य प्रशिक्षण संस्था इनके माध्यम से इस प्रयासों को प्रोत्साहन और मार्गदर्शन दिया जाता है। इसलिए जिला स्तर पर सभी जि. प. राज्य शासन के और न. प. स्कूलों की गुणवत्ता में वृद्धि हो और छात्र का गुणात्मक एव संख्यात्मक उन्नति के उद्धिष्ट को पूरा कर सके। इसकारण जिला स्तर पर विविध उपक्रम किये जा रहे है।

वर्धा जिला में जिला शिक्षण और प्रशिक्षण संस्था वर्धा ने **प्रगत शैक्षणिक महाराष्ट्र के अभियानांतर्गत 'दत्तक स्कूल'** इस उपक्रम में शालेय गुणवत्ता बढती का उपक्रम शुरू किया है। और स्कूल के शिक्षकों को प्रेरित करके शैक्षिक विकास में उनका सहभाग बढ़ाया है।

जिला शिक्षण और प्रशिक्षण संस्था वर्धा तथा नई तालीम समिति के साथ संयुक्त रूप में कार्य किया जा रहा है। DIET, नई तालीम समिति के अंतर्गत 50 स्कूलों में प्रयास किया गया, उनमे से वर्धा जिला में सिर्फ 30 दत्तक स्कूल के रूप में कार्यरत है। जिसका समीक्षण और मार्गदर्शन जिला शिक्षण और प्रशिक्षण संस्था करते है और शिक्षण के सभी आदान (Input) नई तालीम की ओर से गुणवत्तापूर्ण सार्थक शिक्षण की ओर दिए गये । गुणवत्तापूर्ण सार्थक शिक्षण अभियान की शुरुआत अक्टूम्बर 2014 को, वर्धा निजी एव सरकारी स्कूलों के साथ हुई। किसी उत्पादन या सेवा के लिए उपयोग में लाया हुआ **ज्ञान** + **कौशल** +**मूल्य** याने गुणवत्ता है।अच्छा व्यवस्थापन की शिक्षा मतलब गुणवत्तापूर्ण शिक्षा है। शालेय सुविधा, शिक्षक, मुख्याध्यापक, अध्यापन पद्धति, अध्ययन साहित्य, मूल्यांकन और तंत्रज्ञान, परिसर की आर्थिक, सामाजिक एव राजकीय प्रणाली ये गुणवत्ता के नवरत्न प्रतिनिधिक है।

सैद्धांतिक पृष्टभूमि

1992 में राष्ट्रीय शैक्षणिक अधिकार के प्रभावी क्रियान्वयन से केंद्रशासन ने सुधारित कृति कार्यक्रम तैयार किया है। प्राथमिक शिक्षण गुणवत्ता विकास अभियान 5 सितम्बर 2001 से शुरू किया गया। महाराष्ट्र राज्य स्तर पर शालेय शिक्षा के गुणवत्ता के सन्दर्भ में महाराष्ट्र शासन से प्रसिद्ध किये हुए शालेय शिक्षण विषयक श्वेत पत्रिका पर विचार किया और तबसे यह गुणवत्ता विकास का कार्यक्रम शुरू है। इस कार्यक्रम के अंतर्गत जिला शिक्षण और प्रशिक्षण संस्था वर्धा और नई तालीम समिति गुणवत्तापूर्ण सार्थक शिक्षण संयुक्त अभियान चला रहे है।

प्राथमिक स्तर पर शिक्षा में बदलाव और गुणवत्ता के आयाम प्रस्तुत कर, अमल करने के लिए इस अभियान के माध्यम से प्रयास किया गया। इसी पृष्टभूमि में शिक्षा के बुनियादी तत्व जो गाँधी, विनोबा, गुरुदेव रविन्द्रनाथ टैगोर और डॉ. जाकीर हुसेन ,एडवर्ड विल्यम आर्यनायकम, आशादेवी, देवीप्रसाद आदि तमाम शिक्षविदो गिजुभाई बधेका, ताराबाई मोडक, अनुताई वाघ, जुगतराम दवे, ज्योतिभाई देसाई जैसे बल शिक्षविद ने प्रयोगों, अनुभवों से शिक्षा पद्धति विकसित की है। इस दृष्टि से भारतीय परिप्रेक्ष्य में शिक्षा की बुनियाद जिस नई तालीम के रूप में रखी गयी

(1939में उसे राष्ट्रीय शिक्षा नीति के रूप में देखा गया-शिक्षा अकादमिक कौंसिल) इसी काम का विस्तार वर्तमान परिप्रेक्ष्य में किया जा रहा है।

साहित्य पुनरावलोकन (Review Of Literature)

साहित्य समीक्षा किसी भी लघु शोध का एक मूलभूत भाग होता है, जो शोध को व्यवस्थित रूप व दिशा प्रदान करता है। यहाँ अध्ययन विषय से संबंधित उपलब्ध साहित्यों को सारांश रूप में वर्णित किया गया है, जिसमें कृष्ण कुमार, राजा राम भादू, गिजू भाई, मदन मोहन झा, अमिता शर्मा, श्याम चरण दुबे, इवान इलिच, डॉ. गार्गी शरण मिश्र 'मराल' आदि द्वारा लिखित पुस्तकें है तथा शोध से सम्बन्धित उपलब्ध सरकारी दस्तावेजों को भी शामिल किया गया है।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रुपरेखा 2005

यह विद्यालयी शिक्षा का अब तक का नवीनतम राष्ट्रीय दस्तावेज है। इसमें राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रुपरेखा, मार्गदर्शक सिद्धांत, गुणवत्ता के आयाम, शिक्षा का सामाजिक सन्दर्भ और शिक्षा के लक्ष्य को बताया गया है। इसमें बताया गया है कि शिक्षा को उन मूल्यों को प्रसारित करने में सक्षम होना चाहिए जो शांति, मानवता और सांस्कृतिक- विविधता वाले समाज में सहिष्णुता को पोषित करें। अपनी सांस्कृतिक विरासत और राष्ट्रीय अस्मिता को सुदृढ़ करने के लिए पाठ्यचर्या ऐसी होनी चाहिए कि यह युवा पीढ़ी को बदलते सामाजिक सन्दर्भ में उभरते नयी प्राथमिक दृष्टिकोण के परिप्रेक्ष्य में अतीत का मूल्यांकन व पुनर्व्याख्या कर सके। शिक्षा का लक्ष्य मानवीय आदर्शो को भी प्रतिविम्बित करना है। सीखना ज्ञान के निर्माण समाज की तत्कालिक महत्वकांक्षाओ व जरुरतों के साथ शाश्वत मूल्यों तथा समाज के तत्कालिक सरोकारों सहित एक वृहद प्रक्रिया है। सीखने का उद्देश्य बच्चो के सीखने की सहज इच्छा और युक्तियो को समृद्ध करना होना चाहिए। ज्ञान को सूचना से अलग करने की जरुरत है। बच्चो को रटने की क्रिया से मुक्त रखते हुए सक्रिय गतिविधियों और उपलब्ध साधनों का प्रयोग करते हुए बच्चो की समझ को विकसित करना चाहिए। शिक्षकों को ऐसी सकारात्मक कार्यनीति अपनाने की आवश्यकता है, जिससे कक्षा में शिक्षण और अध्यापन की प्रक्रिया इस प्रकार हो सके कि विद्यार्थियों की विविध आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके। इसमें बताया गया है की भाषायें सामाजिक सांस्कृतिक रूप से बनती है और हमारे दैनिक व्यवहार को प्रभावित करती है, इसलिए बच्चो के शिक्षण का माध्यम घरेलू भाषा होना चाहिए। अगर उच्च स्तर पर बच्चो की घरेलू भाषा में शिक्षण की व्यवस्था न हो तो

प्राथमिक स्तर तक की शिक्षा जरुर घरेलू भाषा में देनी चाहिए। बच्चो को द्वितीय भाषा के रूप में अंग्रेजी सिखानी चाहिए। बच्चो को गणित, कंप्यूटर विज्ञान, सामाजिक विज्ञानं, शिक्षाशास्त्र, कला शिक्षा, स्वास्थ्य और शारीरिक शिक्षा तथा विज्ञान की शिक्षा देने की भी चर्चा की गयी है तथा इसके पीछे विभिन्न महत्वों को भी बताया गया है। शिक्षा का विभिन्न स्तरों पर आकलन बच्चो की क्षमताओं, दक्षताओ व अवधारणाओं को दर्शाता है, इसीलिए बच्चो की शिक्षा को विभिन्न स्तरों पर मापा जाता है, जो क्रमश: प्रारम्भिक बाल्यावस्था शिक्षा, आरम्भिक शिक्षा, माध्यमिक शिक्षा, उच्च माध्यमिक शिक्षा, मुक्त विद्यालय और सेतु विद्यालय। इन स्तरों पर आकलन के उद्धेश्यों को भी बताया है। औसतन शिक्षक और विद्यार्थी प्रतिदिन छ: घंटे और एक वर्ष में एक हजार घंटे विद्यालय में व्यतीत करते है। विद्यालय के वातावरण को किस प्रकार व्यवस्थित किया जाये जिससे सिखने-सिखाने की प्रक्रिया को बढ़ावा दिया जा सके, प्रति विस्तृत व्याख्या की गयी है। भौतिक वातावरण के अंतर्गत विद्यालय की साफ-सफाई, विद्यालय भवन, पानी व शौचालय की व्यवस्था इत्यादि बच्चो के सीखने की प्रक्रिया को प्रभावित करते है। सीखने-सिखाने की प्रक्रिया को मनोवैज्ञानिक आयाम भी प्रभावित करते है, जिसमे ऊँच-नीच, अमीर-गरीब, विकलांग आदि बातें आतीं है, इन सब के बीच मध्यांतर को भी दूर करना होगा। अनुशासन, सभी बच्चों की भागीदारी एवं सहभागी प्रबंधन भी समझना होगा। इन सब के अतिरिक्त पुस्तकालय, शिक्षण तकनीक, उपकरण और प्रयोगशाला, संसाधनो का संयोजन एवं उनकी व्यवस्था भी विद्यालय को करनी चाहिए। विभिन्न शिक्षा की गुणवत्ता संबंधी प्रयासों के लिए यह आवश्यक है कि प्राथमिक, उच्च प्राथमिक और माध्यमिक स्तरों के बीच तालमेल पूर्वक पाठ्यचर्या में सुधार किया जाये। व्यवस्थागत सुधारों के सन्दर्भ में यह दस्तावेज पंचायती राज व्यवस्था को सुदृढ़ करने पर बल भी देता है। संविधान के 73 वे संशोधन के पश्चात त्रिस्तरीय पंचायती राज प्रणाली (ग्राम,तालुका,जिला स्तर) में चयनित व्यक्ति की प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा, व्यस्क एवं अनौपचारिक शिक्षा, पुस्तकालय, तकनीकी प्रशिक्षण और व्यावसायिक शिक्षा में भागीदारी भी सुनिश्चित की गयी है।

कुमार,क.(1998). शैक्षिक ज्ञान और वर्चस्व. नई दिल्ली:ग्रन्थ लिपि.

शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर कुछ पाठ्यक्रम होते जिसके अनुसार हम शिक्षा प्राप्त करते है। शिक्षा में पाठ्यक्रम का कार्य बस इतना है कि यह समाज को जिस रूप में देखता है और उसी रूप में समाज के कल्पना को जीवित रखता है। 'क्या पढ़ाया जाये' 'कैसे पढ़ाया जाये' यह कैसे निर्धारित किया जाये और किसके द्वारा निर्धारित किया जाये, यह एक

विचारणीय सवाल है। इस समस्या को हल करने के दो तरीके है, पहला यह कि जो ज्ञान हम सीखना चाहते है यह सिखने योग्य है या नही, इसका निर्धारण सिखने वाले की दृष्टि से होना चाहिए। दूसरा हम जो पढ़ना चाहते है उसके महत्व को समझे। किसी भी पाठ्यक्रम में संबंधित समूहों के प्रतिनिधित्व कि व्याख्या, उसके सांस्कृतिक प्रतीक को बनाने और फ़ैलाने में महत्वपूर्ण होते है और जिस पाठ्यक्रम में तमाम सामाजिक समूहों का आनुपातिक ढंग से प्रतिनिधित्व नही होता तो इन समूहों के बच्चे, वर्चस्वशाली समूहों के प्रतिको के साथ अपनी पहचान बनाने के लिए संघर्ष करना पड़ता है और उन्हें अपने आप को पिछड़े होने के रूप में देखना पड़ता है। हमें पाठ्यक्रम में पिछड़े, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जन-जाति, दलितों के प्रतिनिधित्वो को समुचित रूप से पाठ्यक्रम में शामिल करना चाहिए। शिक्षक इसलिए पाठयपुस्तको से बंधा होता है क्योकि वह सरकार के शिक्षा विभाग द्वारा केवल अनुमोदित ही नही बल्कि लागू की गयी होती है। शिक्षक के लिए पाठ्यपुस्तक एक ऐसा ढांचा तैयार करता है, जिसमे व्यवस्था द्वारा स्वीकृत 'पढ़ाई' का कार्य सिलसिलेवार चलता रहता है। भारत में पाठ्यपुस्तक की संस्कृति की शुरुआत 19 वी शताब्दी से प्रारंभ होती है जब हम गुलामी के जंजीरों में जकड़े थे तब हम अंग्रेजो द्वारा निर्धारित पाठयपुस्तकों और अंग्रेजी की पढ़ाई करते थे, वे अपने अनुसार हमारी संकृतिकरण और समाजीकरण कराते थे। स्वतंत्रताके बाद भी हम अंग्रेजो और अंग्रेजी को नही भूल सके, उन्ही के शिक्षा पद्धति पर चलते आ रहे है। हालांकि कुछ सुधार विभिन्न कमेटियों और समितियों के सुझाव के फलस्वरूप हुआ है। शिक्षक पाठयपुस्तको का दास बन जाता है, उसके पास मौलिक होने का कोई अवसर नही होता इसलिए ऐसा लगता है कि जितनी कम पाठ्यपुस्तके होगी, अधिगम के लिए शिक्षक और छात्र के लिए उतना ही अच्छा होगा। साक्षरता के सन्दर्भ में प्राथमिक शिक्षा की खराब स्थिति के लिए शिक्षा प्रणाली जिम्मेदार है। आज भी अधिकांश बच्चे प्राथमिक स्तर पर ही पढाई छोड़ देते है, इसके पीछे भाषा एक बहुत बड़ी समस्या के रूप में सामने आती है और दूसरे रूप में आर्थिक तंगी के कारण बाल मजदूरी भी एक कारण है, शिक्षा का बाजारीकरण भी इसको प्रभावित करता है क्योकि प्राथमिक स्कूल के लिए बहुत कम संसाधनो की आवश्यकता होती है और सबको साक्षर करने के लिए इसे एक कुंजी के रूप में भी देखा जाता है। हमे बच्चो को पढने के लिए अच्छे वातावरण और सुविधाओ का भी विकास करना होगा और इसके साथ ही प्रशिक्षित अध्यापको की भी आवश्यकता है। समाजीकरण के रूप में स्कूल में प्रयोग की जाने वाली पाठ्यसामग्री का एक अलग और महत्वपूर्ण स्थान है। पाठ्यसामग्री बच्चो के मूल्यों, अभिवृतियो को सीधे प्रभावित करती है, एक सीधे तौर पर और दूसरा छिपे रूप से , जो बच्चो के मूल्यों को दीर्घ समय तक प्रभावित करती है। पाठ्यसामग्री के अतिरिक्त भौतिक स्थिति और शिक्षण की विधि भी बच्चो के मूल्यों को प्रभावित करती है।

गोयल डॉ राजीव.(2010). शिक्षा के सामाजिक आधार. प्रेरणा प्रकाशन: नई दिल्ली.

इस पुस्तक में शिक्षा का महत्व दिया गया जो समाज से पूरक है। सामाजिक परिवर्तन हेतु शिक्षा को जोड़कर उपयोजित तथा समाज कल्याण का परिचय और सम्बन्ध बताया गया। शिक्षा और समाज का सम्बन्ध है, शिक्षा और समाज एक दूसरे पर निर्भर है, एक दूसरे के लिए है। व्यक्ति साक्षर बनेगा तो समाज साक्षर बन सकता है। शिक्षक और छात्र की नैतिकता पर बताया गया। जिससे शिक्षा की गुणवत्ता तथा समग्रता का विकास करने की ओर बल दिया गया। शिक्षक में मातृत्व होना आवश्यक है, तभी छात्र को वात्सल्यता से शिक्षा मिलेगी। शिक्षा और समाजकल्याण सम्बन्धी क्रियाओं से स्कूलों का विकास हो सकता है। सर्वांगींण विकास होने के लिए सबको समान अवसर आवश्यक है। निशुल्क शिक्षा प्राप्त तथा सुविधाओं के विषय में बताया गया। छात्र को नैतिकता तथा अनुशासन का ज्ञान प्रदान करना चाहिए इस पर बात की गयी। समाज में शिक्षा व्यवस्था के विषय में बताया गया। परिवार नियोजन इसका सम्बन्ध शिक्षा के साथ जोड़ा गया। प्राथमिक शिक्षा से उच्च शिक्षा तक बात की गयी। शिक्षक के द्वारा समाज में परिवर्तन किया जा सकता है। उसके लिए शिक्षक में अभिन्न गुणों का अंतर्भाव होना आवश्यक है। शिक्षक को अपने स्कूल का विकास करने हेतु समाज के कार्यक्रम में सहभागी होना आवश्यक है। तभी उन्नति प्राप्त कर सकते है।

कुमार, क.(2002). शिक्षा और ज्ञान.नई दिल्ली: ग्रंथ शिल्पी.

इसमें ज्ञान क्या है, कैसे प्राप्त होता है,इसके आयाम क्या है, और शिक्षा क्या है,कैसे प्राप्त होता है आदि पर चर्चा की गयी है। ज्ञान और शिक्षा में क्या संबंध है, क्या शिक्षा के माध्यम से या पाठ्यक्रम के माध्यम से जो प्राप्त होता है वही ज्ञान है या और कुछ। ज्ञान एक व्यापक भ्रम है,एक राशी है, ज्ञान एक प्रकार का भंडार है जो शिक्षा के जरिये बच्चो तक पहुचता है और प्रौढ़ शिक्षा के जरिये निरक्षरों तक पहुचता है। शिक्षा एक प्रकार से ज्ञान के कुछ धाराओ को वैध और कुछ धाराओ को अवैध बना देती है। ज्ञान के अनुभव, संकेत आदि स्वरूप है, परंतु शिक्षा एक निश्चित पाठ्यक्रम द्वारा प्रदान की जाती है। शिक्षा के विभिन्न नवाचार को बताया गया है। औपनिवेशिक ढांचा से जकड़ी हमारी शिक्षा व्यवस्था से शिक्षित बच्चे पूंजीवादी विश्व संरचना में अपने देश से शिक्षा प्राप्त कर देश से बाहर जा रहे है, क्या यह समाजीकरण के द्वारा हो रहा है, या शिक्षा से शैक्षिक स्वतंत्रता, राजनैतिक और आर्थिक स्वतंत्रता से परिभाषित हो रहा है। रविन्द्रनाथ टैगोर ने ज्ञान के सन्दर्भ में बच्चो को मजदूर बनाने की बात की थी,(कृष्ण कुमार pp:32)। इस पर कई

समितियों ने विचार किया आखिर प्राथमिक शिक्षा में बच्चो के ऊपर पड़ने वाले भार को कैसे कम किया जाए। शिक्षा में किस तरह के प्रयोग और नवाचार किया जाये ताकि बच्चों की शिक्षा को उनके आनन्द के साथ दिया जा सकें। बुनियादी शिक्षा के प्रस्तावना में जो तीन बातें कही गयी थी, वो आज के शिक्षा में भी उतना ही प्रासंगिक नजर आती है या नही, जितना 50-60 वर्षो पहले थी। इस बुनियादी शिक्षा की प्रासंगिकता को हम आज के सामाजिक, सांस्कृतिक और मनोवैज्ञानिक स्तर पर देख सकते है। बुनियादी शिक्षा ऐसी शिक्षा है जो बच्चो में व्यक्तित्व की बुनियाद रखता है। आधुनिक शिक्षा की एक बड़ी समस्या है कि यह ऐसी विशेषताओं को जन्म देना चाहता है जो केवल हमारे कल्पना मात्र में है, जबकि बुनियादी शिक्षा ऐसी विशेषताओं के पक्ष में है जो पहले से हमारे समाज में है। 1966में बुनियादी शिक्षा को कोठारी आयोग को दफ़न करने का श्रेय दिया जा सकता है। इसमें गाव के बच्चो की शिक्षा और शिक्षा में पंचायती राज की भूमिका को बताया गया है। पंचायती राज को शिक्षा में लागू करने का तात्पर्य मौजूदा शिक्षा व्यवस्था पर सामुदायिक दबाव बना कर सुधार की बात कही गयी थी, परंतु यह कहा तक सफल हुआ इसका मूल्यांकन करना भी आवश्यक है। प्राथमिक स्कूल के शिक्षक के साथ चलकर शिक्षा की समस्याओं को समझना पंचायत प्रतिनिधियों के लिए बहुत जरुरी है। इस समय शिक्षा पर व्यापक राष्ट्रीय उपक्रम चल रहा है। देश में बड़े पैमाने पर साक्षरता की बात की जा रही है, प्रत्येक निरक्षर को साक्षर बनाने की कोशिश की जा रही है। समाज को दो भागो में बंट गया है, एक निरक्षर और दूसरा साक्षर। क्या शिक्षित व्यक्ति ही संस्कृति को अच्छे से आगे बढ़ा रहा है और अशिक्षित व्यक्ति संस्कृति को मिटा रहा है। शिक्षित व्यक्ति और अशिक्षित व्यक्ति के संस्कृति में बस लिखित और मौखिक अंतर ही है, जो दोनों को एक दूसरे से अलग कर रहा है। इस शिक्षित और अशिक्षित के बीच में अंतर करने का प्रमुख कार्य राज्य और पूंजीवादी अर्थव्यवस्था कर रही है।

गुप्ता.पवन कुमार (2003). सार्थक शिक्षा की बुनावट. गंगा प्रकाशन:नई दिल्ली

इस पुस्तक में शिक्षा का असर विद्यार्थीयों पर अच्छा हो इसलिए अच्छी शिक्षा का निर्माण आवश्यक है। अनुभव से सीख लेने के बाद गुणवत्ता और सार्थकता पर विचार किया जा सकता है। यह शोध इसी प्रक्रिया का हिस्सा है। शिक्षा में केवल संख्यात्मक विस्तार पर ध्यान देने से नही होगा। असल शिक्षा हो तो उसमे गुणवत्ता और सार्थकता जरुर हो । जिसके लिए सभी प्रयास करते नजर आ रहे है। सरकारी एवं गैरसरकारी संगठनो के स्कूलों के बीच तुलना करके कोई खास फायदा नही। फ़िलहाल अच्छा स्कूल निर्माण करने के लिए क्या कर सकते है ये सोचने की जरुरत है।

यह अध्ययन अंतर्विरोधों और द्वंदों का परीक्षण करता है तथा इस बात पर भी प्रकाश डालता है कि आधुनिक शिक्षा द्वारा आकांक्षाओ को सांचे में कैसे ढाला जाता है। लोगो से प्राप्त उत्तरों का गहराई से विश्लेषण किया गया। जिसमें शहरी-ग्रामीण, पुरुष-महिला, निरक्षर-साक्षर के उत्तरों के बीच तीखा विरोध है और इससे कई महत्वपूर्ण बाते सामने आयी है।

दुबे, श. (2001). शिक्षा, समाज और भविष्य. दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड.

शिक्षा और समाज में गहरा सम्बन्ध है। एक ओर शिक्षा परम्परा की धरोहर को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुंचती है और इस तरह संकृति की निरंतरता को बनाये रखने में सहायक होती है, दूसरी ओर पारिस्थितिक परिवर्तन उसे अनुकूलन का साधन बनने की प्रेरणा देता है। इस प्रकार शिक्षा परिवर्तन का माध्यम है। आज भारतीय शिक्षा प्रणाली अनेक अन्तर्विरोध और अंतरद्वंदों से ग्रस्त है, एक साथ कई विपरीत और विरोधी लक्ष्यों को प्राप्त करने में स्वयं लक्ष्यहीन हो रहा है। इस प्रकार विस्मयकारी वृद्धि का एक परिणाम यह होता है कि गुणवत्ता की बलि देकर परिणाम पर अधिक बल दिया जाने लगता है। इसप्रकार गुणवत्ताहीन शिक्षा से समाज का भविष्य अंधकारमय हो सकता है। शिक्षण की प्रक्रिया में शिक्षक की भूमिका भी बहुत महत्वपूर्ण होती है। अध्यापक की शिक्षा में खुद ही बहुत सारी खामिया और असंगतिया है, उनके कुछ सुस्पष्ट पूर्वाग्रह और पूर्ववृत्तिया है और वे अन्धविश्वास तथा रुढ़िवाद से मुक्त नहीं है। इन्हें अपने ज्ञान के नवीनीकरण का अवसर ही नहीं मिलता है। अत: शिक्षक को आज की साधन सम्पन्न शिक्षा –प्रक्रिया में अपने आपको नवीनीकृत करना होगा तथा उन्हें पूर्वाग्रह, पूर्ववृत्तियाँ, अंधविश्वास तथा रूढ़िवादिता से मुक्त होना होगा तभी शिक्षार्थियों को उचित शिक्षा प्राप्त हो सकेगा।

नारायणमूर्ति एन. आर.(2001). अ बेटर इंडिया अ बेटर वर्ल्ड. चंडीगढ़:मेहता पब्लिशिंग हाउस

यशस्वी जीवन और यशस्वी करिअर एक आवश्यक बात है जिसपर इस चरण में बात की गयी है। जब तक हम अपना व्यक्तित्व दिखायेंगे नही और विचार कृति पर अपना नियंत्रण बनवायेंगे नही तब तक हमारी गुणवत्ता कुछ काम की नही। जैसे धर्म के सिवा विज्ञान अपाहिज है और विज्ञानं के सिवा धर्म अंधा है। तंत्रज्ञान की वजह से जीवन पर प्रभाव इतना बढ़ रहा है कि मानव की मानवता का महत्व है। अपनी शिक्षण व्यवस्था धर्म को पीछे छोड़ रही है पर उसका

अंतर्भाव करने से सर्वधर्मसमभाव को सिखाया जा सकता है। इसमें कहा गया है की कोई भी अपने धर्म के बारे में ज्यादा बोलते नही। पर इसी धर्म की वजह से कभी कभी लड़ाई पे आ जाते है। इसीलिए सबने इसका सम्मान करना चाहिए ताकि शांतता बनाई रखे। अगर यह सिख देनी हो तो माध्यमिक से पहले प्राथमिक स्तर पर दी जाये, परन्तु उसमे सावधानी बरतनी होगी। छात्र के पालक से स्पष्ट करना होगा कि यह केवल धर्म का परिचय दे रहे है न कि आचरण की जबरदस्ती। इसमें शिक्षक को उत्तम प्रशिक्षण की आवश्यकता है ताकि इसका क्रियान्वयन ठीक तरह से हो सके और अपना भविष्य उज्ज्वल हो। शिक्षण और संस्कार से अपने धर्म का अभिमान होगा और दूसरे धर्म के प्रति आदर की भावना। इससे समझ और शिक्षा मिलेगी।

'मराल' ड.ग. (2003). शिक्षा की समस्याएं और समाधान.कानपुर: विकास प्रकाशन.

इस पुस्तक में शिक्षा जगत की समस्याओं पर गम्भीर चिंतन करते हुए उनके निराकरण हेतु सुझाव भी दिया गया है। लोक कल्याणकारी राज्य में प्राथमिक शिक्षा की समस्या अत्यधिक महत्वपूर्ण है, जिस प्रकार भवन के निर्माण में उनकी नींव पर अधिक ध्यान दिया जाता है, उसी प्रकार राष्ट्र के निर्माण में उसकी प्राथमिक शिक्षा पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है। ये प्रमुख समस्याएं निम्न है- पाठशालाओं में खेल कूद के मैदान और सामग्री का अभाव, क्योंकि छोटे बच्चों का जीवन खेल-कूद से ही शुरू होता है और इनकी रूचि भी स्वाभाविक रूप से इसमें ही होती है। अत: इन साधनों के प्रयोग से बालकों की उपस्थिति को स्कूल में नियमित बनाया जा सकता है। वर्तमान पाठ्यक्रम के संबंध में बालकों की शिकायत रहती है कि यह इनके लिए नीरस और बोझिल है। बच्चो के घर का माहौल भी इनकी शिक्षा को प्रभावित करता है, घर पर उचित वातावरण ना मिल पाने के कारण वे अपना गृहकार्य पूरा नही कर पाते है और स्कूल में मार खाने के डर से अनुपस्थित रहने लगते है। अभिभावकों की यदि आर्थिक स्थिति कमजोर है और बालक उनके कामों में हाथ बटाता है तो भी अभिभावक उसे शिक्षा के लिए नही भेजेंगे क्योंकि उनकी आमदनी प्रभावित होगी और साथ ही स्कूल के भी अतिरिक्त खर्चों का भी वहन करना होगा।

अखिल भारतीय नई तालीम समिति द्वारा संचालित, गुणवत्तापूर्ण सार्थक शिक्षण अभियान (GSSA) की रिपोर्ट 2016-2017

गाँधी प्रणित अहिंसक और समता आधारित, शिक्षा के जरिये बदलाव की सम्भावना तथा व्यवहार की सम्भावना किस तरह हो सकती है , इस प्रयास तथा क्रियान्वयन की प्रक्रिया को अभियान के द्वारा आखा गया है। विभिन्न उपागमो के साथ, जनसंचार माध्यमो का उपयोग कर, सामूहिक और व्यापक कार्यक्रमों का भी आयोजन किया गया है। जिससे शिक्षण अभियान व्यापकता के साथ काम कर सके। नये संदर्भो को जोड़ सके। जनमानस और जन के भीतर लोक सहभागिता की पहल हो सके।

शैक्षणिक मूल्यों के साथ सामाजिक मूल्यों तथा सामाजिक दायित्व के प्रति शिक्षक के साथ विद्यार्थियों का भी ध्यान आकर्षित हो रहा है। शैक्षणिक प्रक्रिया में तीन तरह के उपागम (Approches) दिखते है। **व्यक्तिगत उपागम, समूह उपागम, जन उपागम** इन तीनो उपागमो काउपयोग कर कार्यक्रमों, उपक्रमों, कार्यशालाओ तथा जन सहभागिता के कार्यक्रमों का आयोजन किया गया। गाँधी तत्वप्रणाली के अनुसार **बुनियादी-मौलिक सिद्धान्तों** को जमीनी अनुभव के साथ सीखना और सिखाना, **'ज्ञान और काम'** को सम्बन्धो को उजागर करना आदि कार्य के लिए विभिन्न उपक्रमों का आयोजन किया गया। इनमे कई कार्यशाला, मूल्यांकन, प्रस्तुतीकरण तथा मोड्यूल बनाने के साथ तिन प्रमुख कार्यक्रम भी किये गए। जिसमे नाट्य और शिक्षण कार्यशाला, लोकसंवाद शिक्षण यात्रा, बल उत्सव और शिक्षण मेला तथा बालजगत प्रकाशन था।

गुणवत्तापूर्ण सार्थक शिक्षण अभियान के माध्यम से स्कूल की गुणवत्ता, विद्यार्थियों के भीतर आत्मविश्वास और मूल्यों का निर्माण, समाज के साथ सम्बन्ध और अहिंसक समाज की दृष्टि से पहल, गाँधी विचारों की सार्थकता तथा प्रचार-प्रसार एवं शिक्षा में बदलाव की प्रक्रिया उजागर हो रही है ऐसा इस रिपोर्ट से ध्यान में आता है। इसमें भविष्य के कार्यक्रमों का ढाँचा बनाया गया जो 2017 तक पूरा करेंगे। परसबाग़, सामूहिक निर्माण का कार्य, अंग्रेजी और विज्ञान की कार्यशालाओं का आयोजन, डॉक्यूमेंटेशन और रिपोर्टिंग, फिल्म या क्लिप बनाना, प्रस्तुतीकरण के लिए पीपीटी बनाना । तथा इ-लर्निंग के दृष्टि से गुरूजी-वर्ल्ड के सॉफ्टवेयर को 40 स्कूलों में प्रयोग करना।

भादू, र.(2003) शिक्षा के सामाजिक सरोकार. पंचकुला: आधार प्रकाशन.

इस पुस्तक में प्रारम्भिक शिक्षा के विगत दशकों से प्रचलित शैक्षिक प्रणाली की आलोचना की गयी है। सही मायने में आधुनिक शिक्षा और विशेषकर इसके प्रारम्भिक चरण की समाज का निचले तबके तक पहुंच शासन की समस्त प्रक्रियाओं के जनतांत्रिकरण के बिना सम्भव नही हो सकती है। शैक्षिक स्थिति का वस्तुपरक विश्लेषण किये बिना किसी ठोस बदलाव की कल्पना मुमकिन नहीं है। श्री माली के अनुसार "शिक्षा संस्कृति की वाहक ही नहीं, संस्कृति की निर्माता भी है। शिक्षा द्वारा संस्कृति का पुनर्निर्माण होता रहता है। स्कूल समाज का एक अंग होना चाहिए। स्कूल समाज के स्वस्थ जीवन और दर्शन का प्रतिबिम्ब है। स्कूल को यदि हम समाज से दूर रखे तो वे आधुनिक काल में निर्जीव और अप्रगतिशील हो जायेंगे और समाज का नेतृत्व करने का कर्तव्य पूरा नही कर सकेंगे।" हमारे देश में अनिवार्य शिक्षा होने पर सबको शिक्षा का समान अवसर तब तक नही मिलेगा जब तक की आर्थिक असमानता रहेगी। इस पुस्तक में लेखक पब्लिक स्कूल को भी शिक्षण प्रक्रिया के लिए अच्छा नहीं मानता है क्योकि इन स्कूलों का वातावरण, यहाँ का जीवन, रहन-सहन आदि सब कुछ बाहरी अनुशासन पर निर्भर रहता है, यह स्वतंत्र विचार को कम स्थान दिया जाता है इसका परिणाम यह होता है कि पब्लिक स्कूलों से निकले बच्चों में मानवोचित गुण नहीं होते जो साधारण स्वतंत्र शिक्षा प्राप्त बालकों में पाए जाते है।

जीवनाच्या गरजा संपूर्ण । निर्वाहाचे एकेक साधन ।

सम्बंधितविषयाचे समग्र ज्ञान।यांचा अंतर्भाव शिक्षनी।।12।।

- तुकड्यादास(ग्रामगिता)

इसका अर्थ है की जिवन में जितनी भी आवश्यकताये है वही सभी का निवारण है। उस प्रत्येक निवारण का साधन उपलब्ध है। सम्बन्धित विषय का समग्र ज्ञान हमे होना चाहिए जो शिक्षा से मिलेगा। इसलिए शिक्षण में जिवानाभिमुख का अंतर्भाव होना चाहिए।

अध्ययन का तर्क

राष्ट्र के सर्वांगींण विकास के लिए शिक्षा यह मूलभूत घटक है। शिक्षा के सार्वत्रिकरन के लिए शासन के तहत सकारात्मक प्रयास शुरू रहते है। शिक्षा सभी जनता तक पहुचे इसके लिए शासन भारी मात्रा में प्रयास करती है। समाज के सभी घटक को शिक्षा मिलके साक्षरता स्तर बढ़े इसीलिए साक्षरता एव साक्षरोत्तर कार्यक्रम का आयोजन किया जाता है। उदा. प्री-मट्रिक स्कॉलरशिप, आश्रमशाला, विद्यार्थी लाभ योजना, धोरण, आयोग, समिति, प्राथमिक शिक्षण गुणवत्ता विकास अभियान, तथा प्रशिक्षण ऐसे विविध कार्यो का आयोजन होता है।

प्रस्तुत शोध में शिक्षक यह मुख्य भूमिका निभाते है। जब तक शिक्षक गुणवत्तापूर्ण न हो तब तक विद्यार्थियों का विकास नही हो सकता। इसलिए शिक्षको के माध्यम से इस कार्यक्रम के कार्यपद्धति की सक्षमता को जाना जायेगा। गुणवत्ता बढ़ाने के लिए किस आयाम का उपयोग किया जाता है। तथा किस तरह यह अभियान सामाजिक क्षेत्र में अमल में लाया जा सकता है। 'ज्ञान और काम' का सूत्र समाज में लागू किया जा सकता है जिससे समाज में सुधार लाया जा सकता है। तथा यह ज्ञान बेहतर परिणाम हेतु नए ज्ञान का सृजन करेगी।

समाजकार्य ज्ञान में अध्ययन का प्रस्तावित योगदान

यह शोध शिक्षा की गुणवत्ता एवं सामाजिक बदलावपूर्ण है । प्रशिक्षण प्राप्त शिक्षकों की सक्षमता को समझकर अन्य स्कूलों में यह कार्यक्रम लागू किया जायेगा । इस कार्यक्रम की वास्तविकता, उसकी व्यावहारिक क्रियाकलापों और अन्य पहलुओ का अध्ययन करके प्राप्त निष्कर्षो के माध्यम से उचित समाजकार्य हस्तक्षेप के लिए कार्यप्रणाली बनाई जाएगी । साथ ही कार्यक्रम की जागरूकता का प्रसार एवं उसके व्यापक दृष्टिकोण को पाठ्यक्रम के माध्यम से अनुशासनिक अध्ययन के रूप में शामिल करना । पहले सर्वत्र शिक्षा हो इस पर ज्यादा जोर था पर अब वह शिक्षा गुणवत्तापूर्ण हो ये जरुरी है । राज्य एव केंद्र में शिक्षा के विषय पर चर्चा की जाती है, जिसके लिए अनेक संस्था कार्यरत है । वर्धा जिला शिक्षण में गुणवत्ता पाने हेतु जो अभियान चला रही है, वह एक मोड्यूल होगा । जिसका हम अन्य जिलो में तथा राज्य में प्रयोग कर सकते है । इसमें गांव स्तर की शिक्षण व्यवस्थापन समिति होती है जिसमे छात्र के अभिभावक का सहभाग होता है । जिससे शिक्षा-अभिभावक जुडा हुआ है । और शिक्षा समाज से जुड़ जाती है।

शोध प्रविधि

अध्ययन शीर्षक

"जिला शिक्षण एव प्रशिक्षण संस्था (DIET) वर्धा द्वारा गुणवत्ता विकास कार्यक्रम हेतु कार्यरत दत्तक पाठशालाओं का मूल्यांकन''

शोध का महत्व

प्रस्तुत शोध शिक्षा से सम्बन्धित है। बच्चों में ज्ञान की समझ विकसित करने, कक्षा कक्ष प्रबंधन, प्रभावी छात्र शिक्षक संवाद, एवं निर्देशों की उत्तमता; संरचित अध्यापन एवं सीखने पर ज़ोर देने वाली गतिविधियों के दृष्टिकोण से इन कार्यविधियों का सर्वाधिक महत्व है। इसके लिये छात्रों एवं अध्यापकों की कक्षा कक्ष में नियमित उपस्थिति पूर्व प्रतिबंध है। आईसीटी समर्थित शिक्षण और अधिगम के संदर्भ में सीखने की प्रक्रिया के परिणामों में स्पष्ट रूप से प्रत्येक कक्षा और प्रत्येक विषय के लिए संभावित शिक्षण परिणामों पर आधारित है। वर्धा जिला में शिक्षा में गुणवत्ता विकास के लिए गुणवत्तापूर्ण सार्थक शिक्षण अभियान शुरू किया। प्रस्तुत शोध का महत्व अन्य स्कूल के लिए सुझाव हेतु किया गया है।

मूलभूत शोध प्रश्न

- क्या गुणवत्ता विकास कार्यक्रम के तहत प्रशिक्षण प्राप्त शिक्षको की क्षमताओं का विकास हुआ है?
- क्या प्रशिक्षण द्वारा प्राप्त रणनीतियों का शिक्षकों ने क्रियान्वयन किया है?
- जि. शि. प्र. संस्था, दत्तक पाठ्शाला एव नई तालीम, इस संयुक्त कार्यप्रणाली की पद्धति एव तंत्र क्या है?
- क्या प्रशिक्षण लेने के बाद शिक्षकों में बदलाव आया है?

उद्देश्य

- उत्तरदाताओं की सामाजिक, शैक्षणिक स्थिति का अध्ययन करना।
- उत्तरदाताओं को शिक्षण से प्राप्त रणनीतियो के क्रियान्वयन को जानना।

- उत्तरदाताओं ने किये हुए कार्यो के बदलाव को जानना।
- दत्तक शालोओं कि गुणवत्ता विकास कार्यक्रम का मुल्यांकन करना।
- सम्भावित समाजकार्य हस्तक्षेप की तलाश करना।

प्राकल्पना

- ❖ गुणवत्ता विकास कार्यक्रम से शैक्षिक एवं सामाजिक क्षमताओं का विकास होता है।
- ❖ प्रशिक्षण प्राप्त रणनीतियों से सर्जनात्मकता द्वारा गुणवत्ता विकास होता है।
- ❖ स्कूल और समाज से सम्बन्ध प्रस्थापित होने से सामाजिकता विकसित होती है।
- ❖ गुणवत्तापूर्ण सार्थक शिक्षण अभियान से दत्तक पाठशालाओं में बदलाव आया है।

शोध प्रविधि (Research Methodology)

यह शोध अपने चरित्र में मात्रात्मक और गुणात्मक (मिश्रित) दोनों प्रकृति का है।

- **मात्रात्मक प्रविधि-** प्रस्तुत अध्ययन में प्रश्नावली के प्रयोग से सरकारी स्कूलों के शिक्षक और साक्षात्कार अनुसूची द्वारा स्कूल व्यवस्थापन समिति के सदस्य (अभिभावक) से प्रत्यक्ष तौर पर गणनात्मक आंकड़े प्राप्त किये गये है, अत: मात्रात्मक प्रविधि को इंगित करना अपेक्षित है।
- **गुणात्मक प्रविधि-** इसके इतर उन्ही शिक्षक का साक्षात्कार, असंरचित प्रणाली के आधार पर लिए गये है जिनसे प्राप्त आकड़े गुणात्मक प्रकृति के पोषक है।

संकल्पनीकरण

जिला शिक्षण और प्रशिक्षण संस्था वर्धा

यह वर्धा की शैक्षणिक संस्था है, जिसके तहत दत्तक पाठशालाओं को गुणवत्ता विकास कार्यक्रम में अंतर्भूत कर के संयुक्त अभियान शुरू है।

गुणवत्ता विकास कार्यक्रम

गुणवत्ता विकास करने हेतु शिक्षकों के लिए उपक्रम, कार्यशाला और प्रशिक्षण ऐसी कार्यक्रम रचना की है। जिसे गुणवत्तापूर्ण सार्थक शिक्षण अभियान कहते है, जो वर्धा जिला में कार्यन्वित है।

मूल्यांकन

अभियान में सतत दिए जा रहे कार्य प्रणाली से शिक्षको में हुए ज्ञान, क्षमता और सुप्त गुणों का विकास के बदलाव का मुल्यांकन करना।

नई तालीम समिति सेवाग्राम

गुणवत्ता विकास कार्यक्रम को चालना देने हेतु यह संस्था जिला शिक्षण प्रशिक्षण संस्था ने दिए हुए दत्तक स्कूलों को साधन और प्रशिक्षण देने का कार्य कर रही है।

स्कूल व्यवस्थापन समिति

दत्तक स्कूलों में स्थापित स्कूल व्यवस्थापन समिति के सदस्य।

शोध प्ररचना (Research Design)

प्रस्तुत शोध में गुणवत्ता विकास कार्यक्रम के विभिन्न कार्यो का अध्ययन कर के संग्रहित तथ्यों का विस्तृत वर्णन किया गया है अत: शोध मुख्यतः वर्णनात्मक अभिकल्प के रूप में है। इसके अंतर्गत प्राथमिक स्त्रोत के द्वारा प्राप्त आँकड़ो का वर्णन किया गया। सभी प्राप्त आँकड़े संख्यात्मक रूप में है। इसके अंतर्गत प्राप्त निष्कर्षो के माध्यम से समाज कार्यात्मक हस्तक्षेप के द्वारा उचित सुझाव दिया गया।

अध्ययन का भौगोलिक क्षेत्र

वर्धा जिला 1862 तक नागपुर जिला का हिस्सा था। बाद में एक स्वतंत्र जिला हो गया, और इस जिले का मुख्य स्थान कवठा में था। आगे 1866 के बाद इसका मुख्यालय पालकवाड़ी(वर्धा) में स्थानांतरित किया गया। वर्धा जिला 20º18′ नार्थ और 21º21′ नार्थ latitude(अक्षांश) और 78º4′ इस्ट logitude (रेखांश) है। वर्धा ये नाम वरदा इस नदी से मिला। फिर वरदा से वर्धा कहने लगे। अब वर्धा नदी ही कहा जाता है। वर्धा जिला का भौगोलिक क्षेत्र 6310 चौ.किमी. है और 8 तालुका में विभागीत है। वर्धा, देवली, हिंगनघाट, समुद्रपुर, सेलु, आर्वी, कारंजा, आष्टी ये तालुका है।

प्रस्तुत शोध यह वर्धा जिला के दत्तक स्कूलों में किया गया, जो जि. शि. प्र. सं वर्धा ने नई तालीम समिति को दत्तक दिए है। इसीलिए प्रस्तुत शोध का भौगोलिक क्षेत्र वर्धा जिला है।

अध्ययन इकाई

जि. शि. प्र. सं. वर्धा (DIET) द्वारा गुणवत्ता विकास कार्यक्रम के तहत लिए गये दत्तक पाठशालाओं के प्रशिक्षण प्राप्त शिक्षक एवं शिक्षण व्यवस्थापन समिति के सदस्य शोध अध्ययन की इकाई होंगे। यह वे इकाई होंगे जो वर्धा जिला में कार्यरत है।

अध्ययन का समग्र

वर्धा जिला में जि. शि. प्र. सं. के तहत लिए गए पाठशालाओं के प्रशिक्षण प्राप्त 60 शिक्षक, स्कूल व्यवस्थापन समिति के 30 सदस्य को मिलाके प्रस्तुत शोध का अध्ययन समग्र है।

इकाई चयन

प्रस्तुत शोध का समग्र ज्ञात है, DIET, नई तालीम समिति के अंतर्गत 50 स्कूलों में प्रयास किया गया, उनमे से वर्धा जिला में सिर्फ 30 दत्तक स्कूल के रूप में कार्यरत है, इसलिए शोध **जनगणना पद्धति (census method)** से किया गया हैं । जनगणना विधि शोध की एक ऐसी विशिष्ट पद्धति हैं, जिसमे शोध क्षेत्र की समस्त इकाईयों का अध्ययन किया जाता है । इस विधि में शोध क्षेत्र की किसी भी इकाई को अध्ययन से नहीं छोड़ा जाता हैं । इस विधि का प्रयोग सामान्यत: तब किया जाता है , जब शोध का क्षेत्र छोटा और इकाईयों की संख्या बहुत कम होती हैं ।

तथ्य संकलन पद्धति एव तंत्र

तथ्य संकलन हेतु प्राथमिक और द्वितीयक दोनों स्त्रोतों का प्रयोग किया गया है।प्राथमिक आंकड़ो के संकलन हेतु अवलोकन विधि और साक्षात्कार विधि का प्रयोग किया गया है। साक्षात्कार के लिए तकनीक के रूप में अवलोकन तकनीक, संरचित साक्षात्कार तकनीक तथा अनुसूची तकनीक की सहायता ली गयी है।

विधि (Method)

प्रस्तुत शोध में आंकड़ो के संग्रहण के लिए निम्न विधियों का प्रयोग किया गया है-

- **अवलोकन विधि**

प्रस्तुत्त लघु शोध में प्राथमिक सामग्री के संकलन की प्रत्यक्ष प्रविधि के रूप में अवलोकन विधि का सहारा लिया गया है। इसकी सहायता से ज्ञानेन्द्रियो द्वारा नवीन व प्राथमिक तथ्यों का विचारपूर्वक संकलन करने का प्रयत्न किया गया है। जिसके अंतर्गत स्कूल की आधारभूत संरचना, व्यवस्था, नवीनीकरण आदि से सम्बन्धित तथ्यों के संकलन को देखा गया है।

- **साक्षात्कार विधि**

प्रश्नावली तथा असंरचित साक्षात्कार सूची के माध्यम से शिक्षक तथा स्कूल व्यवस्थापन समिति के सदस्यों से सम्बन्धित तथ्यों को संकलित किया गया।

तकनीक एवं यंत्र (Tool & Techniques)

प्राथमिक आकड़ो के संग्रहण में निम्न तकनीक व यंत्रों का प्रयोग किया गया है।

- **अनुसूची**

अनुसूची का प्रयोग शिक्षक तथा स्कूल व्यवस्थापन समिति के सदस्यो के मंतव्यों को प्राप्त करने के लिए किया गया है। शिक्षक को प्रश्नावली दी गयी तथा सदस्यों को साक्षात्कार अनुसूची की सहायता से मंतव्यो को प्राप्त किया गया है।

अनुसूची एक संरचित अनुसूची है जिसमे बंद (Close Ended) और खुले (Open Ended) दोनों प्रकार के प्रश्न शामिल है।

- **प्रत्यक्ष अवलोकन**

प्रस्तुत लघु शोध में प्रत्यक्ष अवलोकन विधि की सहायता से तटस्थ दृष्टि की भांति से दूर से ही बिना किसी हस्तक्षेप के अध्ययन क्षेत्र से संबंधित तथ्यों को इकट्ठा करने का प्रयास किया गया है। इकाई की क्रियाओं और व्यवहारों को निष्पक्ष और स्वतन्त्रतापूर्ण अध्ययन इस प्रविधि की विशेषता है। जिसके अंतर्गत स्कूल की आधारभूत संरचना, व्यवस्था, नवीनीकरण आदि से सम्बन्धित तथ्यों के संकलन को देखा गया है।

- **क्षेत्र टिप्पणी (Field Notes)**

क्षेत्र कार्य में सहभागिता के दौरान विषय से संबंधित कुछ मुख्य बिन्दुओं, विचारो और भावों को भी संकलित करने का प्रयास किया गया है।

द्वितीयक आंकड़ो के संग्रहण में पूर्व साहित्यवलोकन के लिए उपलब्ध विषय आधारित दस्तावेजों (Theme based documents) का प्रयोग किया गया है।

तथ्य संकलन के स्त्रोत (Source Of Data Collection)

प्रस्तुत लघु शोध में तथ्य संकलन के लिए निम्न स्त्रोत का प्रयोग किया गया है।

- **प्राथमिक स्त्रोत-**

प्रस्तुत शोध में प्राथमिक स्त्रोत का संकलन करने के लिए साक्षात्कार पद्धति (interview method) का उपयोग किया है। शिक्षक के लिए प्रश्नावली का उपयोग किया तथा प्रत्यक्ष रूप से साक्षात्कार करने के लिए संरचित साक्षात्कार अनुसूची का उपयोग किया है। यह अनुसूची केवल इसी शोध हेतु निर्मित की जाएगी।

- **द्वितीयक स्त्रोत (Secondary Source)**

शोधकर्ता ने शोध के उद्धेश्य की प्राप्ति हेतु तथ्य संकलन के लिए प्राथमिक स्त्रोत के अतिरिक्त द्वितीयक स्त्रोत का भी प्रयोग किया है। जिसमे सरकारी दस्तावेज़, जर्नल, किताबे, समाचार पत्र-पत्रिकाएँ, इन्टरनेट साइटे व कक्षा व्याख्यान (Class Lecture) आदि शामिल है।

तथ्य विश्लेषण (Data Analysis)

प्रस्तुत शोध में मात्रात्मक आंकड़ो के विश्लेष्ण हेतु SPSS विधि तथा गुणात्मक आंकड़ो के विश्लेषण हेतु विमर्श विश्लेषण विधि का प्रयोग किया गया है। आंकड़ो को विश्लेषित करने में चित्रमय प्रस्तुती का भी सहारा लिया गया है जिसके लिए सारणी, पाई चार्ट, बार चार्ट तथा कॉलम चार्ट का भी प्रयोग किया गया है।

लेखन पद्धति (Report Writing)

प्रस्तुत लघु शोध में सन्दर्भ सूची के लिए APA (American Psychological Association) का प्रयोग किया गया है और साथ ही इसमें पाद टिप्पणी (Footnote) और उद्धरण (Citation) का भी प्रयोग किया गया है।

शोध की सीमा

प्रस्तुत शोध की सीमा निम्न है-

- वर्धा जिला के 30 दत्तक स्कूलों के शिक्षक, अभिभावक/ स्कूल समिति के सदस्यों तक सीमित है।
- प्रस्तुत शोध आंशिक पूर्ति हेतु शोध कार्य को महत्व देता है, जिससे समयावधि दक्षता व संसाधनों के साथ शोध कार्य को पूरा किया गया है, जो इसकी सामान्यीकरण को सीमित करती है।